[2019] 12 एस.सी.आर. 861

कृष्ण प्रसाद वर्मा (डी) टीएचआर। एलआरएस.

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

2011 की सिविल अपील संख्या 8950

सितंबर 26, 2019

**[दीपक गुप्ता और अनिरुद्ध बोस, जे.जे.]**

*न्यायपालिका:*

*न्यायिक सेवा - अनुशासनात्मक कार्यवाही - न्यायिक अधिकारी के खिलाफ - दो आरोपों पर (i) उच्च न्यायालय के आदेश पर ध्यान दिए बिना जमानत देना और (ii) गवाहों की पेशी सुनिश्चित किए बिना साक्ष्य बंद करना - कदाचार का दोषी पाया गया - औचित्य - माना गया: अनुच्छेद 235 संविधान अधीनस्थ न्यायालयों का नियंत्रण उच्च न्यायालय को सौंपता है - उच्च न्यायालय अपने प्रशासनिक नियंत्रण में आने वाले न्यायाधीशों के संरक्षक और संरक्षक भी हैं। अधीनस्थ न्यायपालिका की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए न्यायिक अधिकारियों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई सिर्फ इसलिए नहीं की जानी चाहिए क्योंकि उन्होंने गलत आदेश पारित किए हैं। जब तक कदाचार, बाहरी प्रभाव, किसी भी प्रकार की संतुष्टि आदि के स्पष्ट आरोप न हों - गलत आदेश पारित करने के लिए उचित कार्रवाई इसे प्रशासनिक पक्ष पर दर्ज करना और संबंधित अधिकारी के सेवा रिकॉर्ड पर रखना होगा और ऐसे अधिकारी के कैरियर की प्रगति पर विचार करते समय इसे ध्यान में रखा जा सकता है - यदि गलत या अवैध आदेशों का निरंतर प्रवाह होता है, तो न्यायिक अधिकारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करना उचित कार्रवाई होगी - वर्तमान मामले के तथ्यों में, दोषी अधिकारी को नहीं हटाया जा सकता है कदाचार का दोषी ठहराया गया - दोषी अधिकारी के खिलाफ पारित आदेश रद्द कर दिए गए - भारत का संविधान - अनुच्छेद 235*

**कोर्ट ने अपील स्वीकार करते हुए**

माना: 1.1 जब तक एक मजबूत, निडर और स्वतंत्र न्यायपालिका नहीं होगी तब तक कोई कानून का शासन नहीं हो सकता है, कोई लोकतंत्र नहीं हो सकता है। यह स्वतंत्रता और निर्भयता न केवल उच्च न्यायालयों के स्तर पर बल्कि जिला न्यायपालिका से भी अपेक्षित है। इसलिए, यह महत्वपूर्ण है कि जिला स्तर और तालुका स्तर पर न्यायपालिका पूरी तरह ईमानदार हो, निडर और किसी भी दबाव से मुक्त और किसी भी तरफ से किसी भी दबाव से प्रभावित हुए बिना, केवल फाइल में मौजूद तथ्यों के आधार पर मामलों का फैसला करने में सक्षम है। [पैरा 1 और 2]

1.2 भारत के संविधान का अनुच्छेद 235 अधीनस्थ न्यायालयों का नियंत्रण उच्च न्यायालयों को देता है। उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों पर अनुशासनात्मक शक्तियों का प्रयोग करते हैं। उच्च न्यायालय अपने प्रशासनिक नियंत्रण में आने वाले न्यायाधीशों के संरक्षक और संरक्षक भी हैं। सिर्फ गलत आदेश पारित होने से न्यायिक अधिकारियों पर कार्रवाई नहीं होनी चाहिए. इसमें कोई संदेह नहीं है कि भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहिष्णुता होनी चाहिए और यदि भ्रष्टाचार, कदाचार या न्यायिक अधिकारी के साथ अशोभनीय कृत्य के आरोप हैं, तो इनसे सख्ती से निपटा जाना चाहिए। हालाँकि, यदि गलत आदेश पारित किए जाते हैं तो अनुशासनात्मक कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि इस बात का सबूत न हो कि गलत आदेश बाहरी कारणों से पारित किए गए हैं, न कि फ़ाइल में दिए गए कारणों से। यदि कोई न्यायिक अधिकारी इस तरीके से कार्यवाही करता है जो उसकी प्रतिष्ठा या ईमानदारी को दर्शाता है या उसके कर्तव्यों का निर्वहन करते समय उसकी ओर से लापरवाह कदाचार दिखाने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है, तो उच्च न्यायालय अनुशासनात्मक मामले शुरू करने का हकदार होगा, लेकिन ऐसी सामग्री होनी चाहिए। आदेशों से स्पष्ट है और अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान इसे रिकॉर्ड पर भी रखा जाना चाहिए। [पैरा 3,4 और 8]

1.3 ऐसा नहीं है कि यदि कोई न्यायिक अधिकारी गलत आदेश पारित करता है, तो कोई कार्रवाई नहीं की जाएगी। यदि कोई न्यायिक अधिकारी ऐसे आदेश पारित करता है जो स्थापित कानूनी मानदंडों के विरुद्ध हैं, लेकिन ऐसे आदेशों को पारित करने के लिए किसी बाहरी प्रभाव का कोई आरोप नहीं है, तो उच्च न्यायालय को जो उचित कार्रवाई करनी चाहिए, वह ऐसी सामग्री को प्रशासनिक पक्ष में दर्ज करना और रखना है। यह संबंधित न्यायिक अधिकारी के सेवा रिकॉर्ड पर है। संबंधित न्यायिक अधिकारी के करियर की प्रगति पर विचार करते समय इन

**मामलों पर विचार किया जा सकता है। एक बार जब गलत आदेश को नोट कर लिया जाता है और वे सेवा रिकॉर्ड का हिस्सा बन जाते हैं तो चयन ग्रेड, पदोन्नति आदि से इनकार करने के लिए इन पर विचार किया जा सकता है, और यदि गलत या अवैध आदेशों का निरंतर प्रवाह होता है तो उचित कार्रवाई की जाएगी। न्यायिक अधिकारी को नियमानुसार अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी जाए। जब तक कदाचार के स्पष्ट आरोप न हों, बाहरी प्रभाव, किसी भी प्रकार की संतुष्टि आदि के लिए अनुशासनात्मक कार्यवाही केवल इस आधार पर शुरू नहीं की जानी चाहिए कि न्यायिक अधिकारी द्वारा गलत आदेश पारित किया गया है या केवल इस आधार पर कि न्यायिक आदेश गलत है। [पैरा 16]**

> ***ईश्वर चंद जैन बनाम पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय और अन्य*** **(1988) 3 एससीसी 370: [1988] 1 पूरक। एससीआर 396** ***; भारत संघ एवं अन्य। वी.. ए.एन. सक्सेना*** **(1992) 3 एससीसी 124: [1992] 2 एससीआर 364;** ***भारत संघ एवं अन्य। वी. के.के. धवन*** **(1993) 2 एससीसी 56: [1993] 1 एससीआर 296;** पी.***सी. जोशी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य.*** **(2001) 6 एससीसी 491 : [2001]** ***1*** **पूरक। एससीआर 369** ; ***रमेश चंद्र सिंह बनाम उच्च न्यायालय इलाहाबाद एवं अन्य।*** **(2007) 4 एससीसी 247 : [2007] 3 एससीआर 198 - पर भरोसा किया गया।**

**2.1 वर्तमान मामले में अपीलकर्ता-न्यायिक अधिकारी को पहले आरोप के लिए दोषी ठहराने का मुख्य आधार यह है कि अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय के आदेशों पर ध्यान नहीं दिया जिसके तहत उच्च न्यायालय ने एक आरोपी की जमानत अर्जी खारिज कर दी थी। अधिकारी इस अर्थ में लापरवाही का दोषी हो सकता है कि उसने मामले की फाइल को ध्यान से नहीं देखा और उच्च न्यायालय के आदेश पर ध्यान नहीं दिया जो उसकी फाइल पर था। इस लापरवाही को कदाचार नहीं माना जा सकता। जांच अधिकारी ने यह नहीं पाया कि जमानत देने का कोई बाहरी कारण था। जांच अधिकारी वस्तुतः अपील की अदालत के रूप में बैठकर जमानत देने के आदेश में खामियां निकाल रहा था। [पैरा 11]**

**2.2 जहां तक दूसरे आरोप का सवाल है, जिसमें यह आरोप लगाया गया था कि अपीलकर्ता ने नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 के तहत एक विशेष न्यायाधीश के रूप में सबूत बंद कर दिए जिसके परिणामस्वरूप आरोपी बरी हो गया, इस आधार**

**पर जांच अधिकारी ने कहा अदालत के दो क्लर्कों के बयानों पर लंबी टिप्पणी की गई है कि अपीलकर्ता ने गवाहों की प्रस्तुति सुनिश्चित करने के लिए पुलिस अधीक्षक, जिला मजिस्ट्रेट और अन्य अधिकारियों को कोई संचार नहीं भेजा। जांच अधिकारी के अनुसार, अपीलकर्ता को गवाहों को पेश करने के लिए वरिष्ठ अधिकारियों से संपर्क करने का प्रयास करना चाहिए था। दंड प्रक्रिया संहिता या एनडीपीएस अधिनियम ऐसी किसी प्रक्रिया का प्रावधान नहीं करता है। यह कर्तव्य हैगवाहों को पेश करने के लिए अभियोजन पक्ष की ओर से. वर्तमान मामले में, लोक अभियोजक ने दैनिक आदेश-पत्र के किनारे एक नोट लिखा था कि वह गवाहों को पेश करने में असमर्थ है इसलिए साक्ष्य बंद कर दिए जाएं। अपीलकर्ता को कदाचार का दोषी ठहराते समय लोक अभियोजक के बयान का कोई संदर्भ नहीं दिया गया है। अपीलकर्ता ने एनडीपीएस मामले में अभियोजन पक्ष को गवाहों को पेश करने के लिए 18 स्थगन दिए थे। ऐसा न्यायिक अधिकारी शैतान और गहरे समुद्र के बीच है। यदि वह स्थगन देना जारी रखता है तो उच्च न्यायालय उसके खिलाफ इस आधार पर कार्रवाई करेगा कि वह अपने मामलों का कुशलतापूर्वक निपटान नहीं करता है और यदि वह साक्ष्य बंद कर देता है तो उच्च न्यायालय इस आधार पर कार्रवाई करेगा कि उसने आरोपी को जाने दिया है बेदाग. [पैरा 14,15]**

**<u>केस कानून संदर्भ</u>**

| | | |
|---|---|---|
| **[1988] 1 पूरक। एससीआर 396** | **पैरा 5** | **पर भरोसा किया गया** |
| **[1992] 2 एससीआर 364** | **पैरा 6** | **पर भरोसा किया गया** |
| **[1993] 1 एससीआर 296** | **पैरा 6** | **पर भरोसा किया गया** |
| **[2001] 1 सप्लिमेंट पर। एससीआर 369** | **पैरा 6** | **पर भरोसा किया गया** |
| **[2007] 3 एससीआर 198** | **पैरा 7** | **पर भरोसा किया गया** |

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2011 की सिविल अपील संख्या 8950।

2009 के सीडब्ल्यूजेसी संख्या 3719 में उच्च न्यायालय, पटना के निर्णय और आदेश 05.10.2009 से।

ब्रज किशोर मिश्रा, सुश्री अपर्णा झा, सुश्री कृति एस., अभिषेक यादव, सलाहकार। अपीलकर्ताओं के लिए.

संजय जैन, एएसजी, प्रवीण एच. पारेख, वरिष्ठ अधिवक्ता, योगेश पचौरी, सुश्री बीनू टम्टा, सुश्री अनिल कटियार, क्षत्रशाल राज, निखिल रामदेव, सुश्री तान्या चौधरी, सुश्री प्रत्यूषा प्रियदर्शी, एम/एस। पारेख एंड कंपनी, गोपाल सिंह, श्रीकांत एस., सलाहकार। उत्तरदाताओं के लिए.

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

**दीपक गुप्ता, जे. (मौखिक)**

1. ऐसे देश में, जो कानून के शासन का पालन करता है, न्यायपालिका की स्वतंत्रता पवित्र है। जब तक कोई मजबूत, निडर और स्वतंत्र नहीं होगा तब तक कोई कानून का शासन नहीं हो सकता, कोई लोकतंत्र नहीं हो सकतान्यायपालिका. यह स्वतंत्रता और निर्भयता न केवल उच्च न्यायालयों के स्तर पर बल्कि जिला न्यायपालिका से भी अपेक्षित है।

2. अधिकांश वादकारी केवल जिला न्यायपालिका के संपर्क में आते हैं। वे उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय आने का जोखिम नहीं उठा सकते। उनके लिए अंतिम शब्द मजिस्ट्रेट या अधिक से अधिक सत्र न्यायाधीश का शब्द है। इसलिए, यह उतना ही महत्वपूर्ण है, यदि अधिक महत्वपूर्ण नहीं है, कि जिला स्तर पर और तालुका स्तर पर न्यायपालिका बिल्कुल ईमानदार, निडर और किसी भी दबाव से मुक्त है और केवल फ़ाइल में मौजूद तथ्यों के आधार पर मामलों का फैसला करने में सक्षम है। किसी भी तरफ से किसी भी दबाव से अप्रभावित।

3. भारत के संविधान का अनुच्छेद 235 अधीनस्थ न्यायालयों का नियंत्रण उच्च न्यायालयों को देता है। उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों पर अनुशासनात्मक शक्तियों का प्रयोग करते हैं। निर्णयों की एक श्रृंखला में, इस न्यायालय ने माना है कि उच्च न्यायालय अपने प्रशासनिक नियंत्रण में आने वाले न्यायाधीशों के संरक्षक और संरक्षक भी हैं। समय-समय पर, इस न्यायालय ने ऐसे मानदंड निर्धारित किए हैं जिनके आधार पर न्यायिक अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई की जानी चाहिए। इस न्यायालय ने बार-बार उच्च न्यायालयों को आगाह किया

है कि न्यायिक अधिकारियों के खिलाफ केवल इसलिए कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए क्योंकि गलत आदेश पारित किए गए हैं। गलती करना मानवीय है और हममें से कोई भी, जो न्यायिक पद पर रहा हो, यह दावा नहीं कर सकता कि हमने कभी कोई गलत आदेश पारित नहीं किया है।

4. इसमें कोई संदेह नहीं है कि भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहिष्णुता होनी चाहिए और यदि भ्रष्टाचार, कदाचार या न्यायिक अधिकारी के साथ अशोभनीय कृत्य के आरोप हैं, तो इनसे सख्ती से निपटा जाना चाहिए। हालाँकि, यदि गलत आदेश पारित किए जाते हैं तो अनुशासनात्मक कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि इस बात का सबूत न हो कि गलत आदेश बाहरी कारणों से पारित किए गए हैं, न कि फ़ाइल में दिए गए कारणों से।

5. हम बहुत अधिक निर्णयों का उल्लेख नहीं करना चाहते क्योंकि यह स्थिति बड़ी संख्या में मामलों में निर्धारित की गई है, लेकिन *ईश्वर चंद जैन बनाम में इस न्यायालय की टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय और अन्य 1.* जिसमें इस न्यायालय ने इस प्रकार व्यवस्था दी:

> "14. संविधान के तहत उच्च न्यायालय का अधीनस्थ न्यायपालिका पर नियंत्रण होता है। उस नियंत्रण का प्रयोग करते समय न्यायिक अधिकारियों का मार्गदर्शन और सुरक्षा करना एक संवैधानिक दायित्व के तहत है। एकईमानदार सख्त न्यायिक अधिकारी के मुफस्सिल अदालतों में विरोधी होने की संभावना है। यदि न्यायिक आदेशों से संबंधित तुच्छ मामलों पर शिकायतों पर विचार किया जाता है, जिन्हें न्यायिक पक्ष में उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा जा सकता है, तो कोई भी न्यायिक अधिकारी सुरक्षित महसूस नहीं करेगा और उसके लिए अपने कर्तव्यों का ईमानदार और स्वतंत्र तरीके से निर्वहन करना मुश्किल होगा। एक स्वतंत्र और ईमानदार न्यायपालिका कानून के शासन के लिए अनिवार्य शर्त है। यदि न्यायिक अधिकारियों को छोटी-छोटी बातों पर शिकायत और जांच का लगातार खतरा रहेगा और यदि उच्च न्यायालय गुमनाम शिकायतों को क्षेत्र में रहने के लिए प्रोत्साहित करेगा तो अधीनस्थ न्यायपालिका स्वतंत्र और ईमानदार तरीके से न्याय नहीं कर पाएगी। इसलिए यह जरूरी है कि उच्च न्यायालय को

भी बेईमान वकीलों और वादकारियों द्वारा की गई गलत धारणा वाली या प्रेरित शिकायतों को नजरअंदाज करके अपने ईमानदार अधिकारियों की रक्षा के लिए कदम उठाना चाहिए। मौजूदा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए हमारे मन में कोई संदेह नहीं है कि अपीलकर्ता के खिलाफ बार एसोसिएशन द्वारा पारित प्रस्ताव पूरी तरह से अनुचित था और श्री मेहलावत और अन्य द्वारा की गई शिकायतें प्रेरित थीं जो किसी भी श्रेय के लायक नहीं थीं। यहां तक कि सतर्कता न्यायाधीश ने भी जांच के बाद ऐसा कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया कि अपीलकर्ता किसी भ्रष्ट इरादे का दोषी था या उसने न्यायिक रूप से कार्य नहीं किया था। उनके खिलाफ बस इतना कहा गया कि उन्होंने स्थगन देने में अनुचित तरीके से काम किया।"

6. इसके बाद, भारत संघ और अन्य में निर्धारित आदेश का पालन करना। बनाम एक। *एएनसक्सेना2 और भारत संघ एवं अन्य*। बनाम *के.के. धवन3*, यह *न्यायालय पी.सी. जोशी* बनाम. *यूपी राज्य और Ors.4* इस प्रकार आयोजित:

"7. वर्तमान मामले में, हालांकि जांच अधिकारी द्वारा विस्तृत जांच की गई है, लेकिन एक अलग निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए न्यायिक पक्ष में अपीलकर्ता द्वारा दिए गए प्रत्येक आदेश की जांच करने के अलावा शायद ही कोई सामग्री सामने आई है। यह कि तथ्यों के दिए गए सेट पर एक अलग निष्कर्ष पर पहुंचने की संभावना थी, किसी न्यायिक अधिकारी को एक ही दृष्टिकोण अपनाने के लिए दोषी ठहराने का कोई आधार नहीं है और वह भी केवल इसी कारण से कथित कदाचार के लिए। जांच अधिकारी को कोई अन्य सामग्री नहीं मिली है, जो उसकी प्रतिष्ठा या सत्यनिष्ठा या सद्भावना या कर्तव्य के प्रति समर्पण को दर्शाती हो याकिसी भ्रष्ट उद्देश्य से प्रेरित। अधिक से अधिक वह यह कह सकता है कि अपीलकर्ता द्वारा लिया गया दृष्टिकोण उचित या सही नहीं है और उसे ऐसा कोई उद्देश्य नहीं बताया जा सकता जो अनावश्यक विचार के लिए हो कि उसने उस तरीके से कार्य किया है। यदि प्रत्येक मामले में जहां अधीनस्थ न्यायालय का आदेश दोषपूर्ण पाया जाता है, अनुशासनात्मक कार्रवाई शुरू की जाएगी, तो अधीनस्थ न्यायपालिका का विश्वास हिल जाएगा और अधिकारी निर्णय लिखने से

लगातार डरते रहेंगे ताकि उन्हें सामना न करना पड़े। एक अनुशासनात्मक जांच और इस प्रकार न्यायिक अधिकारी स्वतंत्र या निडर होकर कार्य नहीं कर सकते। दरअसल सावधानी के शब्द के.के. में दिए गए हैं। धवन केस और ए.एन. सक्सेना मामले में कहा गया है कि केवल इसलिए कि आदेश गलत है या की गई कार्रवाई अलग हो सकती है, न्यायिक अधिकारी के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का औचित्य नहीं है। इतनी सावधानी के बावजूद, यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उच्च न्यायालय ने इस मामले में अपीलकर्ता के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का विकल्प चुना है।"

7. रमेश चंद्र सिंह अन्य में. 5 वि. इलाहाबाद उच्च न्यायालय और इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की खंडपीठ ने इस विषय पर पूरे कानून पर विचार करने के बाद, ऊपर उल्लिखित अधिकारियों सहित, जिला न्यायपालिका के अधिकारियों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की प्रथा को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया क्योंकि केवल निर्णय /उनके द्वारा पारित आदेश गलत हैं। इसे इस प्रकार आयोजित किया गया:

"12. इस न्यायालय ने कई अवसरों पर अधीनस्थ न्यायपालिका के अधिकारियों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने की प्रथा को केवल इसलिए अस्वीकार कर दिया है क्योंकि उनके द्वारा पारित निर्णय/आदेश गलत हैं। अपीलीय और पुनरीक्षण अदालतों की स्थापना की गई है और उन्हें ऐसे आदेशों को रद्द करने की शक्तियां दी गई हैं। अपील की सुनवाई के बाद उच्च न्यायालय निचली अदालतों के गलत निर्णयों को संशोधित या रद्द कर सकते हैं। न्यायिक आदेशों के आधार पर अनुशासनात्मक कार्रवाई करते समय, उच्च न्यायालय को अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए।

xxx xxx xxx

"17. जुंजरराव भीकाजी नागरकर बनाम भारत संघ मामले में इस न्यायालय ने माना कि अर्ध न्यायिक प्राधिकारी द्वारा अधिकार क्षेत्र का गलत प्रयोग या कानून की गलती या कानून की गलत उसकी प्रतिष्ठा या सत्यनिष्ठा या अच्छा विश्वास या उसके कर्तव्यों के निर्वहन में लापरवाही या कदाचार दिखाने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है या उसने

किसी पार्टी को अनुचित तरीके से लाभ पहुंचाने के लिए काम किया है या भ्रष्ट इरादे से आदेश पारित किया है, उच्च न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 235 के तहत अपनी शक्ति के आधार पर अपने पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है। फिर भी, ऐसी परिस्थितियों में यह ध्यान में रखना चाहिए कि सभी स्तरों पर न्यायाधीशों को भय या पक्षपात के बिना न्याय करना होगा। एक प्रभावशाली न्यायिक प्रणाली के लिए निर्भयता और न्यायिक स्वतंत्रता को बनाए रखना बहुत आवश्यक है। अधीनस्थ न्यायिक अधिकारियों के खिलाफ प्रतिकूल टिप्पणियाँ करना और उन्हें गंभीर अनुशासनात्मक कार्यवाही के अधीन करना अंततः जमीनी स्तर पर न्यायिक प्रणाली को नुकसान पहुँचाएगा।व्याख्या अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने का आधार नहीं हो सकती है। निःसंदेह, यदि न्यायिक अधिकारी इस तरीके से आचरण करेगा जैसा कि प्रतिबिंबित होगा

8. इसमें कोई संदेह नहीं है, यदि कोई न्यायिक अधिकारी इस तरह से कार्यवाही करता है जो उसकी प्रतिष्ठा या ईमानदारी को दर्शाता है या उसके कर्तव्यों का निर्वहन करते समय उसकी ओर से लापरवाह कदाचार दिखाने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री है, तो उच्च न्यायालय अनुशासनात्मक मामले शुरू करने का हकदार होगा। लेकिन ऐसी सामग्री आदेशों से स्पष्ट होनी चाहिए और अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान रिकॉर्ड पर भी रखी जानी चाहिए।

9. इस मामले के तथ्यों की बात करें तो अपीलकर्ता, जो एक न्यायिक अधिकारी था, के खिलाफ दो आरोप हैं। आरोप इस प्रकार हैं:

**<u>आरोप-1</u>**

"आप, श्री कृष्ण प्रसाद वर्मा, अतिरिक्त जिला के रूप में कार्य करते हुए। एवं सत्र न्यायाधीश, छपरा ने 11.7.2002 को एस.टी. में मेसर्स बिश्वनाथ राय, शिव नाथ राय और प्रदीप राय को जमानत दे दी। 2001 का क्रमांक 514, जो कि छपरा (एम) खतरा पी.एस. से उत्पन्न हुआ था। केस नंबर 453/2000 धारा 302/34 आईपीसी के तहत दर्ज किया गया। इस तथ्य के बावजूद कि बिश्वनाथ राय की जमानत याचिकाएं पहले इस माननीय न्यायालय द्वारा सीआरपीसी में पारित आदेश दिनांक 27.3.2001 और 4.7.2001 के तहत खारिज कर दी गई थीं। विविध. क्रम संख्या 34144/2000 और 15626/2001 क्रमशः श्यो नाथ राय के आदेश 13.2.2001 और 26.11.2001 के तहत सीआरपीसी में पारित किया गया। विविध. क्रमांक 3387/2001 एवं सीआर. विविध. क्रमांक 30563/2001 क्रमशः और प्रदीप राय के आदेश दिनांक 28.2.2001 द्वारा सी.आर. विविध में पारित किया गया। क्रमांक 3599/2001.

आपकी ओर से उपरोक्त कृत्य कुछ असंगत विचारों का सूचक है जो घोर न्यायिक अनौचित्य के समान है, न्यायिक अनुशासनहीनता, सत्यनिष्ठा की कमी, घोर कदाचार और एक न्यायिक अधिकारी के लिए अशोभनीय कार्य।

**<u>आरोप-2</u>**

आप, श्री कृष्ण प्रसाद वर्मा, अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, छपरा के पद पर कार्यरत रहते हुए, एन.डी.पी.एस. के मुख्य अभियुक्त राजू मिस्त्री को बरी करने के इरादे से। रिवीलगंज थाना से उत्पन्न कांड संख्या 15/2000. नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 की धारा 22, 23 और 24 के तहत दर्ज केस नंबर 137/2000 (जी.आर. नंबर 1569, 2000) की कार्यवाही बहुत जल्दबाजी में बंद कर दी गई, जिसके परिणामस्वरूप राजू मिस्त्री को बरी कर दिया गया, जिस पर गाड़ी चलाने का आरोप था। एक जीप क्रमांक W.B.C.4049 जिसमें 90 किलोग्राम वजन था। चरस, मामले के जांच अधिकारी के बयान को रिकॉर्ड करने के लिए सभी कठोर तरीकों का इस्तेमाल किए बिना, क्योंकि रिकॉर्ड पर यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं है कि उक्त जांच अधिकारी के खिलाफ जारी गैर-जमानती वारंट कभी भी उसे दिया गया था।

आपका उपरोक्त कृत्य कुछ असंगत विचारों का सूचक है जो घोर न्यायिक अनौचित्य, न्यायिक अनुशासनहीनता, सत्यनिष्ठा की कमी, घोर कदाचार और एक न्यायिक अधिकारी के लिए अशोभनीय कृत्य के समान है।"

10. जहां तक पहले आरोप का सवाल है, एक प्रमुख तथ्य, जिस पर जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक प्राधिकारी और साथ ही उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया था, वह यह था कि अतिरिक्त लोक अभियोजक, जो राज्य की ओर से पेश हुए थे, ने ऐसा नहीं किया था। आरोपी की जमानत देने की प्रार्थना का विरोध किया। यदि सरकारी वकील जमानत का विरोध नहीं करता है तो आम तौर पर कोई भी न्यायाधीश जमानत दे देगा।

11. अपीलकर्ता को पहले आरोप के लिए दोषी ठहराने का मुख्य आधार यह है कि अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय के आदेशों पर ध्यान नहीं दिया, जिसके तहत उच्च न्यायालय ने दिनांक 26.11.2001 के आदेश के तहत एक आरोपी की जमानत अर्जी खारिज कर दी थी। यह उल्लेख करना उचित होगा कि उच्च न्यायालय ने स्वयं देखा था कि आरोप तय करने के बाद, यदि गैर-आधिकारिक गवाहों की जांच नहीं की जाती है, तो जमानत के लिए प्रार्थना को हटाया जा सकता है, लेकिन पहले निचली अदालत में जाने के बाद। अधिकारी इस अर्थ में लापरवाही का दोषी हो सकता है कि उसने मामले की फाइल को ध्यान से नहीं देखा और उच्च न्यायालय के आदेश पर ध्यान नहीं दिया जो उसकी फाइल पर था। इस लापरवाही

को कदाचार नहीं माना जा सकता। यह उल्लेख करना समीचीन होगा कि जांच अधिकारीयह नहीं पाया गया कि जमानत देने का कोई बाहरी कारण था। जांच अधिकारी वस्तुतः अपील की अदालत के रूप में बैठकर जमानत देने के आदेश में खामियां निकाल रहा था।

12. यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा कि ऐसा लगता है कि बाद में अपीलकर्ता के ध्यान में यह लाया गया कि उसने 11.07.2002 को जमानत देते समय उच्च न्यायालय के आदेश पर ध्यान नहीं दिया था। इसके बाद उन्होंने 23.08.2002 को यानी दो महीने से भी कम समय के भीतर तीनों आरोपियों को नोटिस जारी किया और 11.07.2002 को तीनों आरोपियों को दी गई जमानत रद्द कर दी। यदि उन्होंने पूरी फाइल न देखने की गलती की थी तो यह बात उनके संज्ञान में आने पर उन्होंने गलती सुधार ली। अपीलकर्ता द्वारा जमानत रद्द करने और आरोपियों को फिर से गिरफ्तार किए जाने के बाद, उन्होंने फिर से जमानत के लिए आवेदन किया और इस जमानत आवेदन को अपीलकर्ता ने 18.12.2002 को खारिज कर दिया।

13. आरोपियों की जमानत अर्जी खारिज होने के बाद तीन में से दो आरोपी हाईकोर्ट चले गए. उच्च न्यायालय ने एक आरोपी को जमानत दे दी और दूसरे की जमानत अर्जी खारिज कर दी गई, गुण-दोष के आधार पर नहीं बल्कि इस आधार पर कि उसने इस तथ्य का खुलासा नहीं किया कि उसने पहले जमानत देने के लिए उच्च न्यायालय का रुख किया था। यह स्वयं इस तथ्य का स्पष्ट संकेतक है कि संभवतः अपीलकर्ता द्वारा पारित आदेश भी गलत नहीं है।

14. दूसरे आरोप पर आते हैं, जो नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 (इसके बाद "एनडीपीएस" के रूप में संदर्भित) के तहत है। 18.07.2002 को अपीलकर्ता, एक विशेष न्यायाधीश ने अभियोजन के साक्ष्य को बंद कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण गवाहों की जांच नहीं की गई और परिणामस्वरूप आरोपी को बरी कर दिया गया। जहां तक इस आरोप का सवाल है, जांच अधिकारी ने अदालत के दो क्लर्कों के बयानों के आधार पर लंबी टिप्पणियां की हैं कि अपीलकर्ता ने अधीक्षक को कोई संचार नहीं भेजा था पुलिस, जिला मजिस्ट्रेट और अन्य प्राधिकारियों को गवाहों की पेशी सुनिश्चित करनी चाहिए। जांच अधिकारी के अनुसार, यह एक गंभीर मामला है, साक्ष्य को बंद नहीं किया जाना चाहिए था और अपीलकर्ता को वरिष्ठ अधिकारियों से संपर्क करने का प्रयास करना चाहिए था। गवाहों को पेश किया गया। आपराधिक प्रक्रिया संहिता या एनडीपीएस अधिनियम ऐसी किसी प्रक्रिया का प्रावधान नहीं करता है। गवाहों को पेश करना अभियोजन पक्ष का कर्तव्य है। इस मामले में भी, दिलचस्प बात यह है कि सरकारी वकील ने दैनिक आदेश पत्र के किनारे यह नोट कर दिया था कि वह गवाहों को पेश करने में असमर्थ हैं, इसलिए साक्ष्य बंद कर दिए जाएं। हम यह समझने में असफल हैं कि अपीलकर्ता को कैसे फाँसी दे दी गईजबकि संबंधित लोक अभियोजक के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गई या

अनुशंसा नहीं की गई। हम यह नोट करने के लिए बाध्य हैं कि जांच अधिकारी ने जांच करते समय, अपराधी अधिकारी के तर्कों पर विचार करते हुए नोट किया था कि उसने एक दलील दी थी कि उसने साक्ष्य बंद कर दिया क्योंकि लोक अभियोजक ने बयान दिया था, लेकिन पकड़े रहने के दौरान अपीलकर्ता कदाचार का दोषी है, लोक अभियोजक के बयान का कोई संदर्भ नहीं दिया गया है।

15. हम यह भी नोट कर सकते हैं कि अपीलकर्ता का मामला यह है कि उसने एनडीपीएस मामले में अभियोजन पक्ष को गवाहों को पेश करने के लिए 18 स्थगन दिए थे। ऐसा न्यायिक अधिकारी शैतान और गहरे समुद्र के बीच है। यदि वह स्थगन देना जारी रखता है तो उच्च न्यायालय उसके खिलाफ इस आधार पर कार्रवाई करेगा कि वह अपने मामलों का कुशलतापूर्वक निपटान नहीं करता है और यदि वह साक्ष्य बंद कर देता है तो उच्च न्यायालय इस आधार पर कार्रवाई करेगा कि उसने आरोपी को जाने दिया है बेदाग. यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 235 का उद्देश्य नहीं है। इसीलिए हम फिर से दोहराते हैं कि प्रशासनिक पक्ष पर उच्च न्यायालय की जिम्मेदारियों में से एक यह सुनिश्चित करना है कि जिला न्यायपालिका की स्वतंत्रता बनी रहे और उच्च न्यायालय जिला न्यायपालिका के संरक्षक और संरक्षक के रूप में कार्य करे।

16. हालाँकि, हम यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि हम किसी भी तरह से यह संकेत नहीं दे रहे हैं कि यदि कोई न्यायिक अधिकारी गलत आदेश पारित करता है, तो कोई कार्रवाई नहीं की जाएगी। यदि कोई न्यायिक अधिकारी ऐसे आदेश पारित करता है जो स्थापित कानूनी मानदंडों के विरुद्ध हैं, लेकिन ऐसे आदेशों को पारित करने के लिए किसी बाहरी प्रभाव का कोई आरोप नहीं है, तो उच्च न्यायालय को जो उचित कार्रवाई करनी चाहिए, वह ऐसी सामग्री को प्रशासनिक पक्ष में दर्ज करना और रखना है। यह संबंधित न्यायिक अधिकारी के सेवा रिकॉर्ड पर है। संबंधित न्यायिक अधिकारी के करियर की प्रगति पर विचार करते समय इन मामलों पर विचार किया जा सकता है। एक बार जब गलत आदेश को नोट कर लिया जाता है और वे सेवा रिकॉर्ड का हिस्सा बन जाते हैं तो चयन ग्रेड, पदोन्नति आदि से इनकार करने के लिए इन पर विचार किया जा सकता है, और यदि गलत या अवैध आदेशों का निरंतर प्रवाह होता है तो उचित कार्रवाई की जाएगी। न्यायिक अधिकारी को नियमानुसार अनिवार्य सेवानिवृत्ति दी जाए। हम फिर से दोहराते हैं कि जब तक कदाचार, बाहरी प्रभाव, किसी भी प्रकार की संतुष्टि आदि के स्पष्ट आरोप न हों, अनुशासनात्मक कार्यवाही केवल इस आधार पर शुरू नहीं की जानी चाहिए कि न्यायिक अधिकारी द्वारा गलत आदेश पारित किया गया है या केवल आधार पर कि न्यायिक आदेश ग़लत है.

17. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर, हम अपील की अनुमति देते हैं, उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द करते हैं और अपराधी अधिकारी के खिलाफ पारित सभी आदेशों को रद्द करते हैं। उन्हें 31.12.2019

को या उससे पहले सभी परिणामी लाभ देने का निर्देश दिया गया है। 25,000/- रुपये की लागत के साथ अपील स्वीकार की जाती है।

कल्पना के. त्रिपाठी अपील स्वीकार की गई

आशीष तिवारी द्वारा अनुवादित।